भगवत् कृपा

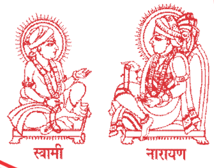

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संग पत्रिका

वर्ष 23 अंक 5 | शुक्रवार, 26.5.2000 | वार्षिक चंदा : 50-00

निमंत्रण

आइये.......
गुणातीत समाज को घड़ने वाले
व
नींव समान ब्र. स्व. प.पू. काकाजी महाराज का 82वाँ प्रागट्य दिन
'ताड़देव' मंदिर में
दिनांक 11 जून, रविवार 2000 की शाम को 6.00 से 9.00 मना कर
खुद को कृतार्थ करने
आप सपरिवार मित्रमंडल सहित निमन्त्रित हैं......

-योगी डिवाईन सोसाईटी, दिल्ली

अलबेली विभूति-प.पू. काकाजी का प्राकट्य दिन !

12 जून.....प्रभुस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज की जयंती का महामंगलकारी दिन! हम सभी के लिए गुरुभक्ति अदा करके धन्य होने का दिन.....अपनी राह से भटक गए सेवकों के लिए अंतर से प्रार्थना करके जहां अटके हैं वहां से आगे जाने का दिन......

महापुरुषों का धरती पर अवतरित होना आस्तिकों के लिए मुमुक्षुओं के लिए महोत्सवरूप बनता है, क्योंकि महापुरुषों का अवतरण जीवों के बंधन तोड़ने के लिए उन्हें माया के भवसागर से पार ले जाने होता है। इस कथन की स्थूलरूप में अभिव्यक्ति श्रीमद्‌भागवत में हैं। वसुदेव-देवकी को कंस ने जेल में बंदी बना कर रखा था। पर, भगवान कृष्ण के जन्म लेते ही वसुदेव देवकी के बंधन टूट गए और वे बंधनमुक्त हुए थे। इसी प्रकार प.पू. काकाजी के धरती पर प्रागट्य से एक ओर जहां उन्होंने गुरुभक्ति की पराकाष्ठा का आदर्श रखा, तो दूसरी ओर अनेक जीवों की जन्मों की जड़ता के बंधन तुड़वा कर उन्हें अध्यात्म के अधिकारी बनाये....

प.पू. काकाजी का जीवन इतना भव्य और उदात्त था कि लेखनी भी लिखने को शरमा जाये। निर्दोषबुद्धि के बेताज बादशाह-अक्षरधाम की उस अलमस्त मूर्ति को याद करते ही इन्द्रियों-अंतःकरण का प्रवाह जैसे थम जाता है। उनके विशाल जीवन, उनके अनंत गुण, अनेक भक्तों ने उनकी दिव्य सत्ता

जो एहसास करी, अविरत उपदेशधारा, एक तरफी (वॅन वे ट्राफिक) अस्खलित करुणा.......वह सब भला लेखनी का सीमा से कैसे बांधा जा सकता है? परन्तु उस भव्य व्यक्तित्व को अनुभव किए हुए भक्तिसभर हृदय मौन भी नहीं रह पाते....और प.पू. काकाजी जैसी विरल विभूति के प्रति गुरुभक्ति अदा करने की एकमात्र भावना से भक्तों के दिल महिमा गाने की यात्रा करने अधीर सी हो आती है। संबंध में आये सभी को निर्वासनिक करके स्वयं जैसी ब्रह्मानंद की मस्ती में रहते करने का संकल्प प.पू. काकाजी ने हम सभी के लिए किया। गुणातीत सत्संग के इस बाग को प.पू. काकाजी ने अपने खून से सींचा। और.....प.पू. काकाजी के मुख से वचनरूपी अमृत का प्रवाह-गंगा के निर्मल प्रवाह की भांति बहता ही रहा-करूणा बरसाता ही रहा.....आज प.पू. काकाजी भले स्थूलरूप से नहीं हैं, लेकिन परब्रह्म तत्त्व तो कहीं विलीन होता नहीं। तो, वे वैसे के वैसे अभी भी मौजूद हैं। प.पू. काकाजी ने अपने कई लेखों द्वारा भी यह बताना चाहा कि वे हम से क्या कराना चाहते हैं? प.पू. काकाजी द्वारा लिखा निम्न लेख हमें उनका अभिप्राय दशाता है। जो-जो अभी भी उनकी इन बातों को लेकर चल पड़ेगा, उसकी हर परेशानी में, उलझनों में प.पू. काकाजी सहायरूप होंगे ही-उसे एक कदम-आगे लें ही जाएंगे.....तो, आइये प.पू. काकाजी के इस लेख से अपनी साधना को सरल बनायें....

अंतःकरण का मौन

'ब्रह्मरूप होकर परब्रह्म को देखे वह पहचाने कहे गये....'

लेकिन -मन से नहीं, बुद्धि से नहीं, चित्त से नहीं, शरीर से नहीं-पर तुम्हारे अंतःकरण के पार-विचार और भावशून्यता के बाद यानि कि-मन के मौन के बाद अंतःकरण की शांति हांसिल करने के बाद-उसे देखो, सुनो, पुकारो। वह एकाग्रचित्त से तुमने उसे देखा और सुना, सो-स्वामी की बात प्र. 11 की 167 के मुताबिक आज ही आत्यंतिक ज्ञान हुआ। जीव में चोट लग गई। मायिक विचार और मायिकभाव पिघल गया। यह हुआ अंतःकरण के पार का मन और हृदय के पार का, ब्रह्म का विचार! और वही सच्चा संबंध करा कहा जाए। सो, निर्विचार, निवितर्क और निर्द्वन्द्व हुए बिना का संबंध फाल्टी (भ्रममात्र) है, मायिक है-हमने मान लिया है कि हम जुड़े हैं। सो, महाराज को 500 परमहंसों, लाडुबा, जीवुबा किसी का भी भरोसा नहीं आया। एक का भी नहीं केवल एक गुणातीत का-एक का ही और तभी तो वे अद्वितीय थे!

सो प्रगट का यह रहस्य समझे बिना गुजारा ही नहीं है। वह नहीं समझे थे, तभी तो निष्कुळानंस्वामी ने गाया-'पियु गया परदेश रे.......'

ऐसे ही आज कोई कहे कि-'योगीजी महाराज गए'-यानि भगवान के उस तत्व को कालधर्म लग गया। यूं, मूर्तिमान स्वरूप द्वारा प्रभु अखंड रहे हैं-यह प्रगट का रहस्य समझ नहीं पाये......सो सिद्धदशा आई लेकिन ब्राह्मीस्थिति प्राप्त हुई नहीं.....उसकी अनंतता में प्रवेश नहीं कर पाये। बापा हम सभी को ऐसी भूमिका में ले जाना चाहते हैं.....तो अब हम (अपने) जीव को सत्संगी बनाएं और उससे पहले मन को सत्संगी बनाएं। यानि मन को 'दिव्य'-स्वरूप के साथ तादात्मय को-एकता को पाया हुआ मन बनायें। मतलब कि-जैसे जीव और मन की मित्रता है, वैसे ही उसके असंग को जान कर स्वरूप के साथ मित्रता करो। और वह मन दिव्य बनने पर खूब काम करेगा, सहायरूप हो जायेगा। फिर जीव को सत्संगी बनाओ और वहां जीव इच्छारहित हो जायेगा। यह 'एक के अंत को पाए' कहा जाए। यह अंतरायरहित का संबंध हुआ और उस के बाद सहज ही सुहृद्भाव रह पायेगा। वर्ना तो मानसिक सुहृद्भाव रहेगा, मन आध्यात्मिक भी हुआ हो, परन्तु प्रसंग बनने पर हिल जायेंगे।

सो, अब जागे तब से सुबह। अंतःकरण के पार हमें पहुँच जाना है। उसके लिए हमारा जो भी अंग हो उसका स्वरूप के वचन से अतिक्रमण करो। खाली हो जाओ या उसमें गुम हो जाओ। डूबकी लग दो। मरते-मरते नहीं करना है; क्योंकि, **एक भरोसा तो है ही कि मुझे मिले हैं वे भले ही अखंड निर्दोष व अखंड दिव्य नहीं माने जाते, परन्तु वे खूब दयालु हैं और उन्होंने मुझे ग्रहण किया है। सो, वे मुझे डूबने नहीं देंगे-मरने भी नहीं देंगे व मेरी कसर अपने सिर पर लेकर भी पूरा कराएंगे ही।** यदि इतना सद्भाव दिल में होगा, तो वे तो अति दयालु पुरुष हैं। सो, पहले हम कबूल करें-सच्चे दिल से कि मैं जुड़ा हुआ तो हूँ, लेकिन रहस्य पता नहीं है....

तो अब, इस रहस्य को समझने खुले दिल से हृदय की भावना से-तीव्र संवेदना से अभीप्सा करेंगे, तो वह परम रहस्य समझ आ जाएगा और वही प्रत्यक्ष की सच्ची निष्ठा है। तो, अंतःकरण को पहले स्थिर करो, जिससे कि वह शांत हो। हृदयाकाश में रहे प्रभु प्रेरणा करेंगे-सूझाएंगे और आगे-पीछे उनकी लीला दिखाई देने लगेगी और वच. प्र. 1-24-72 एवं म. 17-66 के मुताबिक इसे स्वरूप में अखंडवृत्ति हुई कही जाये। यह हमारे मूल अज्ञान की निवृत्ति हुई। हमारी 'स्व' की अस्मिता का ज्ञानप्रलय हुआ। अब हमारा जीव ब्रह्मरूप होकर भगवान में जुड़ने लगा। तो अंतःकरण की अखंड समता व स्थिरता से उनमें ही चौबीस घंटे जुड़े रहो। फलस्वरूप अखंड शांति, सुख, बल व आनंद रहेगा ही और वहाँ फिर इन्द्रियों-अंतःकरण के ज्वार-भाटे समाप्त हो गए एवं जीव में भगवान

बैठ गए। तो उन्हें अखंड रहने दो। लेकिन तुमने यदि कोई संकल्प किया तो वहां से वे चले जाएंगे, क्योंकि वहाँ फिर वह मायिक मन आ गया। सो मोह जागा, सो विचार आया, तब जाकर शब्द बोले गए और क्रिया हुई!

तो अब क्या करना? आँख, कान, मुँह बंद करके दृष्टि उपशम करो। यानि कि अंतःकरण में जिन्हें देखना हैं उन्हें बाहर देखा करो। अरे! देख-देख कर तो थक गए और अभिनिवेश हो गया कि मुझे संबंध है। लेकिन, अनन्यभाव नहीं है, सो तलाक ले लेते हैं। सो, **उनमें भरोसा नहीं। फिर प्रारब्ध और प्रकृति बदलेगी ही कैसे? यूं वर्तना है मायिक रीति से और लेना है भगवान का सुख-वह भला किस प्रकार हो पायेगा?** तो अब निम्न लिखे मुताबिक करने लग पड़े।

(1) अब तक का तुम्हारा संबंध बिलकुल भूल जाओ। क्योंकि तुम उसमें रमें हुए ही हो। मनमानी ही करी है। तो पहले तो उस बंदर को पूर्णतया छोड़ कर उसे मित्र बनाओ। वच. म. 25 के मुताबिक-

'हे महाराज! मैं आपका बालक, मेरा आज ही नया जन्म हुआ है। मैं अनपढ़ हूँ.....'

और जानवर मनुष्य को देखताहै यूं नहीं देख कर, हनुमान राम को जिस प्रकार देखे यूं-ऐसी भावना से प्रभु को देखो....यानि अर्जुन ने कृष्ण को चतुर्भुज (रूप में) देखा वहां से शुरुआत हुई। हम तो हमारी कल्पना के मुताबिक ही भगवान को ठहराने वाले हैं। भले, लेकिन अब भगवान को ही देखा करो और **थोड़ा तो समझो कि मैं जीव और वे जगदीश-पल में जो चाहे सो करें-ऐसे मानव स्वरुप में मिले हैं।** तो, उस तत्व को जैसा है वैसे पहचानना है और समझना है। सो, तीव्र अभीप्सा और हृदय की संवेदना से खूब दृढ़तापूर्वक पुकार करो-

'हे प्रभु, आपकी करुणा और कृपा से मैं तुम्हारे जोग में आया हूँ। कहाँ मैं अल्पज्ञ और कहाँ तू-सर्व सत्ताधीश-सर्वज्ञ। इस बारे में तो मैं अनपढ़ हूँ, सो हे प्रभु, तू मुझे स्वीकार कर ले-ग्रहण कर ले। मैं स्वरूपज्ञान में कुछ भी जानता नहीं। मुझे वह ज्ञान दे दे...'

यह आध्यात्मिक नया जन्म हुआ। शब्द से नई देह बन गई। सो, मैं आज ही जन्मा बालक-परन्तु पूर्व के ज्ञानवाला-भरतजी जैसा। अब मेरा आप से संबंध हुआ है, तो आप से चिपका रहूँगा। बंदरी के बच्चे की तरह नहीं, परन्तु बिल्ली के बच्चे की तरह 'म्याऊँ-म्याऊँ' करूँगा। मुझे तो सच में आप ही चाहिए। तो, आप मुझे मुर्गी के बच्चे की तरह सेना। यही सच में बिलकुल सरल, सर्वोत्तम और श्रेष्ठ मार्ग है। सो, **जैसी तुम्हारी तैयारी, जैसा तुम्हारा समर्पण ऐसी तुम्हारी स्थिति, अनुभव और आनंद।**

(2) अब, आंख-कान-मुँह बंद करके अंतरात्मा में उन्हें स्थिर करो और चिपके रहो। दूसरे जो भी विचार आएं वे पिछले जन्म के हैं-क्योंकि यह तो आध्यात्मिक नया जन्म हुआ है। सो, **वहाँ यदि तुम तीन ही मिनिट चिपके रहोगे तो प्रकाश होगा और प्रभु प्रेरणा करेंगे।** उनकी हाजिरी का हृदय में और बाहर एहसास होगा। सो, अंतःकरण सहज स्थिर और शांत हो जाएगा। सो, इस प्रकार दूसरे कदम में ऐसा साक्षीभाव रख कर उनके चरणों में पड़े रह कर तुम्हारे अंग के मुताबिक भजन, सेवा, समागम, ध्यान, शून्य की तीव्रता बढ़ाना। वह सच्चा स्वरूपयोग शुरु हुआ। यह भजन की समाप्ति के बाद उन्हें प्रार्थना करना। भजन यानि -उनमें लय हो गए-जिस प्रकार से तुम हो पाओ उस प्रकार। तीव्रता से तल्लीन हो कर फिर प्रार्थना करो-

'हे प्रभु, अब आप प्रेरणा करना, आप अखंड रहना और सूझ देना।'

यह हुआ सचेतन साक्षीभाव। सिर्फ-तू ही आकारा और तू ही आधारा, केवल तू ही तू ही -यह हुई सच्ची अंतर्दृष्टि-आत्मदृष्टि। अब यहां से हमारा सच्चा संबंध शुरु हुआ।

(3) दो जनों के साथ ऐसा मित्रभाव दृढ़ करके क्रिया में उनकी (प्रभु की) सत्ता को मान्य करके उन्हें (प्रभु को) पुकार करो और फिर भावना करो। वहां, माँ बालक को जिस निर्दोषभाव से देखती है वैसे प्रभु तुम्हारी ओर दृष्टि करेंगे और माँ को जैसे बच्चे के साथ आत्मीयता है, वैसे हमारा भी है। तो, **उन्हें जो नापसंद हो वह नहीं करना। यह भावना रखने पर उनकी ओर देखते रह कर तीन मिनिट स्थिर होंगे तो उनकी आवाज आएगी कि बेटा! ऐसा कर। ब्राह्मीशक्ति तेरे साथ में है। कोई तेरा बाल भी बांका कर नहीं पायेगा।** बालक को और तो कुछ समझ नहीं , लेकिन माँ की पहचान है। और जो होगा वह मेरे हित में ही करेगी, सो फिर जो कुछ भी बने उसका प्रेम से स्वीकार कर लो। तुम उसकी गोद में निश्चिंत और सुरक्षित हो, तो अब अखंड निर्भय रहने के लिए तुम्हारे भाई-बहनों के साथ सुहृद्भाव से वर्तना। यानि-भले और कुछ ना कर पाओ, पर हँसता मुँह और हँसता दिल-रखना। क्योंकि, लॉटरी लगी है। जो ढूंढते थे वह मिल गया। चैक **भले वापिस आया, लेकिन बैंक में बैलेन्स है, सो-दस्तखत में शायद फर्क होगा।** सो, क्षोभ या चिंता नहीं है। सो, **दोबारा कोशिश करो। बनना ही है और....वहां आश्चर्यजनक घटना बनेगी। हाश होगी और आनंद हो जाएगा।** यह तुम भगवदी हुए। हम सभी को-गुणातीतज्ञान वाले सभी को भगवदी तो होना ही पड़ेगा। एकांतिक बाद में होंगे, लेकिन भगवदी तो तत्काल हो पाएं ऐसा है। उसके लिए **स्वरुप के साथ समझदारी का संबंध और समर्पण-ऊपर के मुताबिक का होना चाहिए** या ऐसे संबंध के लिए ऐसे जुड़ जाने की नियमित रूप से आदत डालनी चाहिए।

यहां जीतेजी ही मरना पड़े और मर कर ही जीना पड़े। जीतेजी ही मरे यानि-अज्ञान टला और मरे यानि मन अमन हो गया और फिर से सजीवन हुए-सो समन हुआ। यह मन आध्यात्मिक बन गया और फिर कोई भी दो परम एकांतिक की प्रसन्नता पाने पर मन दिव्य बन जाएगा। वह सच्चा भगवदी!

फिर उसका स्वभाव बदल जाता है। उसके अंतर में कोई भी मनसूबे नहीं रहते। गोलोकी भक्ति भी नहीं करता। चार प्रकार की मूर्ति की भी इच्छा नहीं होती। वह निष्कामी और निर्मानी बन जाता है। यानि कि-उसे इच्छा और अपेक्षा रहित रांकभाव से-नम्रभाव से हर एक क्रिया में वर्तने की आदत पड़ जाती है। यानि, छोटी-बड़ी हर एक क्रिया में वर्तने की आदत पड़ जाती है। यानि, छोटी-बड़ी हर एक क्रिया करते समय वह यूं सावधान रहता है....हर एक चीज उन्हें अर्पण करके ही लेता है। सभी आरंभ स्वरूप में से ही करता है, जो इंद्रियों–अंतःकरण को तो बिलकुल जँचेगा ही नहीं। क्योंकि-करोड़ों वर्ष की आदते हैं। लेकिन, **अब यदि सब कुछ गँवाने के बाद भी यह सयानापन रखा करेंगे तो हम सनाथ हो जाएं।** हमारा जीव अखंड सुहागी है। पू. पप्पाजी और पू. स्वामिजी कहते हैं वैसे हमारा मार्ग सदा-सनाथ का है, वर्तमान में ही अखंड रहना है। फलस्वरूप दोनों पांव अक्षरधाम में रहेंगे। सो, ऐसे मुक्तों के साथ प्रेमभाव से बोलना-प्रेमभाव से वर्तना, तभी ऐसे सुहृद् बन कर रह पाओगे और तब ही मूर्ति का सुख आएगा। स्वरूप के साथ यह मिलन चैतन्य मिलन है। एक बार यह मिलन हो जाए-जैसा जागास्वामी का गुणातीतानंदस्वामी से हुआ-तो, जीव बिलकुल बदल जाए। फिर से मिश्रितभाव रहेगा नहीं। यह है मन की शांति के बाद का मार्ग। इसलिए सच्चे भगवदी को तो हमेशा सावधानी के दरवाजे रहना पड़े। यानि वह सावधान ही रहे। उसे (सत्त्व-रज-तम) गुण तो बिल्कुल बाधारूप ना हो, वे गुण तो कभी व्याप्त ही नहीं हो। 'समता'-उसका मूल धर्म है फिर आध्यात्मिक समता आती है। उसे सचेतन साक्षीभाव कहा जाए। फिर सभी में प्रभु ही दिखाई देंगे और क्रियायोगों में हठ, मान, ईर्ष्या आएगी नहीं। क्षोभ, परेशानी या विक्षेप हो तो समझना कि मूर्ति गई-दिव्यभाव गया। तब तक मन है ही और तब स्वरूप उपशम करके-मन को भावावेश में ले जाना। यूं प्रतिलोमपन का या स्वरूप उपशम का बार-बार अभ्यास किया करो। पांच-दस बार एकांत में बैठ कर भीतर में गहरे उतर कर उसकी प्रेरणा के लिए प्रतीक्षा किया करो-मानसिक अनुवृत्ति के मुताबिक नहीं, लेकिन स्वरूप की अनुवृत्ति के मुताबिक। तब ही अंतराय टलेगा।

पर **यदि उन्हें ब्रह्मस्वरूप माना होगा-निर्गुण माना होगा तो ही यह बनेगा।** सो, वहां मन के विचार और भावना में बह जाना संपूर्णतया छोड़ देना पड़े। यानि कि उसके पास 'मैं'-'लेकिन'-'मुझे' नहीं चलेगा। बाहर साक्षात् मूर्ति हो उसे देखा करो, वर्ना अंतर में उसे देखा करो। मध्यबिन्दु भूलो ही नहीं यानि-अखंड अनुसंधान रखो। वह अंतराय टल गया। पू. स्वामिजी जिसे कहते हैं-सत्पुरुष का दिल में गुण आने पर सद्भाव के कारण निर्वासनिक होने से भगवान ही दिखाई पड़ेंगे और आगे-पीछे खेलते दिखाई देंगे। फलस्वरूप निर्विचार और निर्वासनिक होने से भगवान ही दिखाई पड़ेंगे और आगे-पीछे खेलते दिखाई देंगे। फलस्वरूप निर्विचार और निर्वितर्क हो ही जाएंगे। लेकिन, ब्रह्मस्वरूप मान कर करना पड़े। यानि हम बिलकुल निष्क्रिय और वो संपूर्ण सचेतन सक्रिय। यानि कि-मैं तो तेरी बंसी और फिर मैं तेरा प्रकाश। तो वहां वे प्रत्यक्ष हैं ही।

सो नियमित रूप से

(1) उपशम की दृष्टि,

(2) अंतर में सद्भावना,

(3) प्रायश्चितरूप प्रतिलोमभाव की प्रार्थना,

और फिर

(4) प्रतिलोमभाव से चिपके रहने की

धारणा तीन मिनिट भी किया करने की आदत डालनी।

तो भगवान के साथ अखंड संबंध एकता हो जाएगी। यहां वच. प्र. 1 के मुताबिक अखंड संबंध-एकता हो जाएगी। निर्दोषबुद्धि की शुरुआत हुई इसे कही जाए। तब जा कर बड़ों को उसका संपूर्ण भरोसा आए....और वही सच्चा परम एकांतिक बना कहा जाए। फिर दिव्य सभानता सहज ही रहेगी, रखनी नहीं पड़ेगी....

इन चार विषयों को पक्के करने पर ब्रह्मविद्या की कॉलेज में पास तो जरूर हो जाओगे। भले ही बड़ी मुश्किल से भी, पर पास तो हो जाओगे। बाकी की 100 प्रतिशत की पूर्णाहुति वे करवा देंगे और जब तक पूर्णता पर नहीं पहुँचेंगे, तब तक प्रसंग बनते ही रहेंगे। तो, आज से शुरु करें और (मंजिल तक) पहुँचने तक इस ठहराव को दृढ़ पकड़े रखें। तो, बड़े सत्पुरुष की प्रसन्नता मिलेगी और पहुँच जायें ऐसा पात्र बना देंगे।

पू. बापा को यही करवाना था। पू. स्वामिजी तथा पू. पप्पाजी जैसों को यही करवाना है। तो, अब हम सब लग पड़ें और ऐसा (हमसे) ना हो पाए तो, ऐसे जो वर्तते हों उनके चरणों में विनती करें और (वे) डाँटे, टोके तो भी गुण ही लें, तो भी ऐसी ही प्राप्ति.......यह है स्वरूप के साथ के तादात्मय ज्ञान का राजमार्ग। अक्षरधाम का राजमार्ग खुला है......तो, उबड़-खाबड़ ना भटक कर मंजिल पर पहुँच जाओ और आनंद करो।

-प.पू. काकाजी महाराज के पत्र में से
नवंबर 1975

तो, हे काकाजी! अब एक ही चाहना है कि हमारा वर्तन-हमारा व्यवहार-हमारा भजन हमारी सरलता उस कक्षा की हो जाए कि जो भी हमें देखे उसे सहज ही प्रश्‍न उठे कि ओहो प.पू. काकाजी कैसे होंगे? यही हमारी सच्ची गुरुभक्ति कही जायेगी ना?

आपकी मूर्ति सिद्ध कर लें-यही हमारे जीवन का अंतिम लक्ष्य बने, वही आपकी सच्ची जयंती मनाई कही जाए। वही आपकी सच्ची सेवा कही जाए, वही हम सच्चे अर्थ में आपके हुए कहे जायें-बाकी मंदिर चाहे सोने के भी बनायें तो भी क्या? **इन वैभवों की-क्रियायोगों की आपको जरा भी कीमत नहीं थी। तो आप द्वारा हमारे लिए किए गए उस परिश्रम को-हमारे प्रति की आपकी प्रीति को कभी भी भूलें नहीं। आपको हमारे द्वारा जो कराना था-वही अभी भी कराना है, वो बात हम कभी भूलें नहीं।**

हमें तो बस यह निश्‍चय ही करना है-बाकी तो हमारे चैतन्य के विकास के लिए आप स्थूलरूप से जब थे और प्रसंग खड़े करते थे, वैसे ही अभी क्रियाशील हो, परन्तु हम प्रसंग पर आपका दिया ज्ञान भूल जाते हैं और विक्षेप-क्षोभ-अभाव में चले जाते हैं।

तो, अब हम सब मिल कर-सुहृद्‌भाव से आपकी जयंती पर याहोम होने कृतनिश्‍चयी बनें और आपकी मूर्ति सिद्ध कर लें। इकट्‌ठे मिलजुल कर साथ में कुछ काम करेंगे तो **मतभेद** तो खड़े होंगे ही, पर कभी कैसे भी संजोगों में उन बातों को महत्व देकर आपस में मनभेद खड़े ना होने दें.......**ऐसी बातों को एक ओर रख-कर-अरे! उन्हें जला कर भी आपकी मूर्ति-आपकी प्रसन्नता पाकर इस अनमोल प्राप्ति का ही जतन करने हमारी सैकण्ड-सैकण्ड व्यतीत हो।** आपकी मूर्ति के सुख से ही सुखी रहना है....जीवन का यह निशान-इसी जन्म में पूर्णाहुति कर लेने का मूर्ति सिद्ध कर लेने का ध्येय कभी भूलें नहीं...

इस भावना से लग पड़ेंगे-जैसा कि प.पू. काकाजी ने ऊपर लिखे लेख में भी बताया कि जागे तब से सुबह मान कर-भूतकाल सदंतर भूल जाएं.....प.पू. काकाजी अतिशय दयालु हैं....उनकी दया का कोई पार नहीं है वे तो अभी भी हम पर निरंतर अपनी करूणा बरसा रहे हैं। हमारी नज़र अगर सतत् इनकी तरफ होगी तो प.पू. काकाजी हमें ब्रह्मभाव में प्रवेश करा ही देंगे। हमें बस यही कर लेना है और भरोसा रख कर लग पड़ना है।

✡✡✡✡✡

ब्रह्मलीन......

काफी मुक्तों को यह दुःखद समाचार अब तक तो मिल ही चुका होगा, फिर भी गुणातीत समाज के कई मुक्त इस अचानक बनी घटना से अनभिज्ञ भी होंगे......22 अप्रैल, 2000 की दोपहर को 2:22 बजे **लुधियाना स्वामिनारायण मंदिर** के महंत **पू. उत्तमस्वामिजी** अक्षरधाम सिधार गए.....

अचानक इनके अक्षरवास होने का दुःखद समाचार सुन कर प.पू. गुरुजी सन्न रह गए....प.पू. गुरुजी का उदास मुख मंडल उनके हृदय का दुःख व्यक्त कर रहा था। पिछले करीब चार महीने से पू. उत्तमस्वामिजी हाई शुगर की बीमारी से गुज़र रहे थे। अचानक शुगर अधिक बढ़ जाने से हुए हार्ट एटैक के कारण उन्होंने स्थूल रूप से विदा ले ली...उनका पंचभूत का शरीर पंचतत्व में विलीन हो गया व आत्मा गुरुहरि योगीजी महाराज के चरणों में अक्षरधाम में जा बैठी.....

गुरुहरि योगीजी महाराज ने उन्हें दीक्षा दी थी। दादर (मुंबई) मंदिर में प.पू. योगीजी महाराज की आज्ञा से प.पू. महंतस्वामिजी की निश्रा में रह कर हरिभक्तों की स्वागतसेवा भोले-भाले भाव से बखूबी निभाते उन्हें कई पुराने जोगीओं ने देखे होंगे.....फिर 1966 में जब विभाजन हुआ तब से प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की निश्रा में हम संतों के साथ रहे.....वडोदरा जिले के कई गांव एवं ओड, बेंग्लौर, जयपुर वगैरह जगह के मुक्तों को गुणातीत समाज से जोड़ने की उन्होंने सेवा करी.. 1969 में प.पू. काकाजी, प.पू. स्वामिजी तथा प.पू. पप्पाजी की आज्ञा से दिल्ली भी आये....और पिछले करीब 20 साल से वे स्वतन्त्र रूप से लुधियाना रह कर पंजाब में घूम-घूम कर स्वामिनारायण धर्म का प्रचार करने की अनुपम सेवा कर रहे थे....पंजाब की भूमि पर उन्होंने कईयों को भगवान स्वामिनारायण का आश्रित बना कर प्रगट की निष्ठा कराने की सेवा करी। विषय-वहम और व्यसन छुड़वाए। पू. उत्तमस्वामिजी बहुत शूरवीर प्रकृति के व दृढ़निश्‍चयी थे... संकल्पसिद्ध थे... कईयों के कष्ट निवारण किए, कईयों के मनोरथ पूरे किए... कईयों को अपने संबंध से प्रभु के मार्ग पर अग्रसर किए....सो, उन्होंने स्थूल रूप से हमारे बीच से भले ही विदाई ली है, पर अपने भक्तों के हृदय में वे हमेशा जीवंत रहेंगे।

और...जिन-जिन्हों को उन्होंने प्रभु की राह पर अग्रसर किए.. प्रभु का संबंध कराया वे हमेशा उनके ऋणी रहेंगे..अब उनके द्वारा प्राप्त उपदेश को वर्तन में रख कर वे उनकी दिव्य खुशबू फैलाएं...

प.पू. गुरुजी ने बताया था कि पू. उत्तमस्वामिजी ने 22 अप्रैल को शरीर छोड़ा......उनकी त्रयोदशी की तिथि 4 मई प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की जयंती के मंगलकारी दिन पर आयेगी। यह बात बहुत सांकेतिक अर्थ लिए हुए है कि पू. उत्तमस्वामिजी गुणातीत समाज में हमारे बीच ही हैं।

भजन

(रागः जिन्दगी मौत ना बन जाए.......)

गुरुजी का संबंध अनमोल दिया है मुक्तों
गुरुजी का संबंध अनमोल दिया है मुक्तों
कोटि-कोटि वंदन हो, कोटि-कोटि वंदन
काकाजी को वंदन हो, काकाजी को वंदन
मूर्ति इनकी अपने दिल में बसा लो मुक्तों
गुरुजी का संबंध अनमोल दिया हैं मुक्तों
कोटि-कोटि वंदन हो, कोटि-कोटि वंदन
काकाजी को वंदन हो, काकाजी को वंदन
मूर्ति इनकी अपने दिल में बसा लो मुक्तों
गुरुजी का संबंध अनमोल दिया है मुक्तों
महिमा काकाजी की ही, जीव में समाई है
साधुता गुणातीत -सी........
गुणातीत–सी........
साधुता गुणातीत-सी काकाजी से पाई है
मोक्ष का द्वार है ये, भक्तों का सहारा है
जीवभाव, छुड़ा दें, साधु ये निराला है
इनके दर्शन से ही हम, प्रभु का दर्श पाएंगे
इनको पहचानेंगे तो, काकाजी को पाएंगे, पाएंगे
कोटि-कोटि वंदन हो, काकाजी को वंदन
काकाजी को वंदन हो, काकाजी को वंदन
मूर्ति इनकी अपने दिल में बसा लो मुक्तों
गुरुजी का संबंध अनमोल दिया है मुक्तों
कोटि-कोटि वंदन हो, कोटि-कोटि वंदन
काकाजी को वंदन हो, काकाजी को वंदन
मूर्ति इनकी अपने दिल में बसा लो मुक्तों
गुरुजी का संबंध अनमोल दिया है मुक्तों
गुणातीत भाव वाले, हम सभी साधु बनें
हम सभी साधु बनें, हम सभी साधु बनें
हम सभी साधु बनें, हम सभी साधु बनें
स्व का समर्पण करके मिल के हम काम करें
करके, समर्पण, मिलजुल कर, सब काम करें,
हम काम करें
मिलजुल कर सब काम करें, मिलजुल कर सब काम करें
प्रभु प्रगट ही हैं, प्रत्यक्ष रखें अब तो, अब तो
लयलीन उसमें सदा, रहा करें हम अब तो, अब तो
दिव्य बन जाएंगे हम, इनको अखंड दिव्य मानें,
साकार ब्रह्म मिले, तत्व से पहचानें,
कोटि जन्मों की कसर टालें वो समर्थ मिले,
देह को छोड़ जिसे पाना ये वो हैं मुक्तों
मूर्ति इनकी अपने दिल में बसा लो मुक्तों, मुक्तों, मुक्तों
गुरुजी का संबंध अनमोल दिया है मुक्तों
कोटि-कोटि वंदन हो, कोटि-कोटि वंदन
काकाजी को वंदन हो, काकाजी को वंदन
मूर्ति इनकी अपने दिल में बसा लो मुक्तों
गुरुजी का संबंध अनमोल दिया हैं मुक्तों-4

व्रतोत्सवसूची

(1) दि. 30.5.2000 मंगलवार-एकादशी, व्रत
(2) दि. 31.5.2000 बुधवार -ब्र.स्व.योगीजी महाराज का प्रागट्य दिन
(3) दि. 1.6.2000 गुरुवार -प.पू. पप्पाजी महाराज का दृष्टा दिन, गुणातीत ज्योत स्थापना दिन
(4) दि. 12.6.2000 सोमवार -भीम एकादशी, व्रत एवं **प.पू. काकाजी महाराज का प्रागट्य दिन (जो कि 11 जून 2000, रविवार, शाम को 6:00-9:00 'ताडदेव' मंदिर में मनाया जाएगा।**

Air Mail
'**Bhagwatkripa**' Monthly Magazine
Despatched on 25/26 of every month
If undelivered please return to :—
Owner, Publisher, Editor :—
SHRI PRABHAKAR RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY—DELHI
'Tardeo', Kakaji Lane, Swaminarayan Marg,
Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Type Setting : **SHAYOKA Type Setting**
Rama Vihar, Delhi-110081 Phone: 5953035
Printed at : **Bharat Packaging and Allied Industries**
C-2/12, Mayapuri Industrial Area, Phase-II, New Delhi-110 064
Tel.: 5401210, 5402393

TO,